एम. ए. द्वितीय तथा
चतुर्थ सेमेस्टर

# भवभूति विरचित उत्तररामचरितम् में अलंकार - योजना

भाषा और भावों पर असाधारण अधिकार होने के कारण भवभूति के नाटकों में प्रायः सभी प्रमुख अलंकारों के प्रयोग मिलते हैं तथा अलंकार अनायास सिद्ध हैं, भवभूति ने उपमा की नवीन विधाओं को जन्म दिया है। उनके अर्थान्तरन्यास सुभाषित के रूप में प्रचलित हो गये हैं, 'उत्तररामचरितम्' में उन्होंने 38 अलंकारों का प्रयोग किया है और प्रयोग की दृष्टि से उन्हें अधोलिखित अलङ्कार अधिक प्रिय हैं-

उपमा अलंकार का प्रयोग - 74 बार किया है,
उत्प्रेक्षा " " " - 38 बार " "
काव्यलिंग " " " 26 " " "
रूपक " " " 21 " " "
अर्थान्तरन्यास " " " 15 " " "

इसके अतिरिक्त चित्र तन्त्र - तुल्ययोगिता, स्वभावोक्ति, अतिशयोक्ति, निदर्शना, दृष्टान्त, विरोधाभास, व्यतिरेक, विभावना, दीपक, विशेषोक्ति अलंकार भी दृष्टिगत होते हैं।

Scanned by CamScanner

उपमाओं के प्रयोग में भवभूति ने नवीन एवं मौलिक कल्पनाओं के द्वारा नवीन विधा प्रस्तुत की है जैसे- प्रथम अङ्क के 29 वें श्लोक -

" अयं तावद्बाष्पस्त्रुटित इव मुक्तामणिसरः " में

आँसू की उपमा टूटी हुई मोती की माला से तथा 'सस्वेद बाहु' की उपमा चन्द्रकौमुदी से परिस्नुत चन्द्रकान्त मणि से —

" जीवयन्निव ससाध्वसश्रमस्वेदबिन्दुरधिकण्ठमर्प्यताम्'

बाहुरैन्दवमयूखचुम्बितस्यन्दिचन्द्रमणिहारविभ्रमः ॥" (उ.रा.च. 1/34)

की है साथ ही सजीव की उपमा निर्जीव से की है। सीता के लोकापवाद की तुलना पागल कुत्ते के विष से की है —

" हा हा धिक् ... विषमिव सर्वतः प्रसक्तम्"

दैव दुर्विपाकादालर्कं (उ० रा० च० - 1-40)

अरुन्धती की उपमा चतुर्थ अंक के दसवें श्लोक में उषा से की है।

'करुण' रस की उपमा पुटपाक से करके राम के अमूर्त की मूर्त से उपमा का उदाहरण प्रस्तुत किया है - "अनिर्भिन्नो गम्भीरत्वादन्तर्गूढघनव्यथः।

पुटपाकप्रतीकाशो रामस्य करुणो रसः॥"

( उ० रा० च० - 3.1 )

Scanned by CamScanner

तृतीय अंक के चतुर्थ श्लोक में सीता की उपमा कारुण्य और विरह-व्यथा से करके मूर्त की उपमा अमूर्त से, का अनूठा उदाहरण प्रस्तुत किया है —

" कारुण्यस्य मूर्तिरथवा शरीरिणी विरहव्यथेव वनमेति जानकी" (3.4)

अर्थान्तरन्यास अलंकार के प्रयोग अत्यन्त प्रभावशाली एवं अनुकरणीय बन उठे हैं। कतिपय ~~उदाहरण~~ उदाहरण जो व्यावहारिक जीवन में सुभाषितों के रूप में प्रचलित हैं जैसे —

1- वज्रादपि कठोराणि मृदूनि कुसुमादपि।
लोकोत्तराणां चेतांसि को नु विज्ञातुमर्हति ॥" (उ.च.-2/7)

2 "गुणाः पूजास्थानं गुणिषु न च लिङ्गं न च वयः॥" (उ.रा.च. 4.11)

3. ऋषीणां पुनराद्यानां वाचमर्थोऽनुधावति (वही 1.10)

4- तीर्थोदकं च वह्निश्च नान्यतः शुद्धिमर्हति (वही-1.13)

5- सतां सद्भिः सङ्गः कथमपि हि पुण्येन भवति (वही-2.1)

6- रहस्यं साधूनामनुपधि विशुद्धं विजयते (वही-2.2.)

7- न तस्य किमपि द्रव्यं यो हि यस्य प्रियो जनः (वही-2.19)

8- अपि ग्रावा रोदित्यपि दलति वज्रस्य हृदयम् (वही-1.28)

9- प्रियानाशे कृत्स्नं किल जगदरण्यं हि भवति (वही-6.30)

10- पुरन्ध्रीणां चित्तं कुसुमसुकुमारं हि भवति (वही-4.12)

Scanned by CamScanner